Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2016 = 4.44, www.srjis.com
UGC Approved Sr. No.48612, FEB-MAR 2018, VOL- 6/26
https://doi.org/10.21922/srjhsel.v6i26.11627

भारतीय संगीत परम्पराओं में वाद्योंके विकास का महत्व

सरसवत्स कुमार

अस‍िस्टेंट प्रोफेसर, परफोर्मिंग आर्ट्स, एस. डी. पी. कालेज फार वूमन, लुधियाना

Abstract

भारतीय संगीत जगत में परिवर्तन कोई नई बात नहीं है । चाहे वह परिवर्तन गायन शैली में हो, चाहे वादन शैली में या नृत्य शैली में । काल के प्रवाह के साथ साथ परिवर्तन सृष्टि का नियम है । भारतीय शास्त्रीय संगीत में वाद्यों की अगर बात करे तो समय समय पर वाद्यों में भी परिवर्तन आया है । चाहे एक तंत्री वीणा हो या त्रितंत्री या सप्त तंत्री, इन सब वाद्यों की रचना समय की आवश्यकता के अनुसार हुई है । आधुनिक काल में अब हमारे पास नए प्रयोग करने के लिए आधुनिक तकनीक की प्रयोगशालाएं है जिससे किसी भी वाद्य यंत्र की कृत्रिम ध्वनि उत्पन की जा सकती है । परन्तु जो मिठास और माधुर्य वाद्यों की मौलिक ध्वनि में है वह कृत्रिम ध्वनि में नहीं हो सकती । अत: वाद्य भारतीय शास्त्रीय संगीत का एक अभिन्न अंग है जिसके बिना शास्त्रीय संगीत की कल्पना भी नहीं की जा सकती ।

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

किसी संस्कृति का सुरक्षित रहना परम्परा माना जाता है । परम्परा के साथ हमारी प्राचीन विधाएँ जुड़ी होती है और उनकी मान्यतायें चिरकालिक होती हैं और वे समाज में प्रतिष्ठित रहती हैं। परम्परा का अर्थ चिंतन तथा विश्वास करने की विधि का हस्तांतरण माना जाता है ।

प्राचीन काल से ही भारतीय संगीत में समय – समय पर अनेक परम्पराओ का विकास हुआ है तथा परम्पराएँ ही संगीत के लिए मार्ग प्रशस्त करती रही है । जिसके आधार पर नवीन शैलीयों एवं वाद्यों का विकास हुआ तथा भारतीय संगीत अपनी विशिष्टता बनाने में सक्षम रहा । आज भारतीय वाद्य संगीत परम्परा का जो रूप हमारे समुख उपस्थित है वह किसी एक व्यक्ति की खोज या बौद्धिक उपज द्वारा निर्मित नहीं, यह तो कई वर्षो की साधना से फलीभूत हुई है । वर्तमान भारतीय वाद्य संगीत परम्परा एक सुदृढ़ परम्परा को लेकर नवीन युग की ओर अग्रसर हो रही है ।

मानव मस्तिष्क की यह विशेषता है कि जो ध्वनि वह अपने शरीर अथवा किसी अंग से उत्पन नहीं कर सकता वह ध्वनि वह किसी अन्य माध्यम से अर्थात किसी यन्त्र के माध्यम से पैदा करने का प्रयास करता

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

है। अपने मस्तिष्क की सतत गतिशीलता के कारण वह सदा ही कुछ न कुछ नवीनता को खोजता रहता है तथा प्रयोग करता रहता है। अत मानव की इस प्रवृति ने भी वाद्यों की उत्पति और विकास में योगदान दिया।

सभ्यता के प्रारम्भ या उससे भी पहले से ही मनुष्य किसी न किसी रूप में वाद्यों का प्रयोग करता रहा है । सभ्यता के विकास के साथ साथ वाद्यों का विकास भी हुआ है। प्राचीन वाद्यों का प्रारंभिक रूप प्राकृतिक था। उनमें सुधार कर समयानुरूप उनका विकास किया गया और लगभग सभी आधुनिक प्रचलित वाद्य वीणा, सितार, सरोद, संतूर, विचित्र वीणा, दिलरुबा, तार शहनाई, तबला आदि सभी वाद्य प्राचीन वाद्यों से ही विकसित हुए।

एक विस्तृत अर्थ में वाद्य वह हर एक वस्तु है जो ध्वनि का उत्पादन करती है। विशिष्ट रूप से वाद्य का तात्पर्य मानव निर्मित संगीतात्मक वस्तु यन्त्र (वाद्य) से है, जो संगी तिक ध्वनि उत्पन करने में सक्षम है।

“वाद्य शब्द का शाब्दिक अर्थ है ‘वदनीय’ या बजाने योग्य ‘यन्त्र विशेष’ ”

श्री लालमणि मिश्र के अनुसार “संगीतात्मक ध्वनि तथा गति को प्रकट करने के उपकरण को वाद्य कहा जाता है।”[1]

“वाद्य – वाद् (कहना) + णिच् + यत् बाजा बजाना”[2]

हिंदी शब्द सागर और भाषा कोष में वाद्य का अर्थ बाजा दिया गया है। परन्तु ज्ञानशब्द कोष में वाद्य का अर्थ बाजा के अतिरिक्त कथन और भाषण दिया गया है।[3]

अत: वाद्य को परिभाषित करने के लिए कहा गया है “वदतीति वाद्यम” अर्थात जो बजाने से बोलता है, वह वाद्य कहलाता है।

वाद्य का प्रयोग संगीत में किसी अन्य वाद्य यन्त्र की संगत के लिए या स्वतंत्र रूप से भी किया जाता है। अन्य कलाएँ गायन, नृत्य, नाटक आदि सभी में वाद्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। संगीत में जितना विस्तार वाद्य संगीत में होता है उतना अन्य किसी कला में नहीं होता। वाद्य वादन अपने आप में एक ऐसी कला है जो अन्य किसी कला की अपेक्षा नहीं रखती है। दूसरी अन्य कलाएँ (गायन एवं नृत्य) इसके सहयोग के बिना अधूरी रहती है। वाद्य संगीत, गायन तथा नृत्य के साथ केवल सौन्दर्य को ही नहीं निखारता बल्कि उनकी रिक्तता को भरने के अतिरिक्त संगत के क्षणों में कलाकार को विश्राम देने के साथ साथ प्रदर्शन को भी संवारता है।

भारतीय परंपरा में प्राचीन वैदिक युग से विभिन्न प्रकार के वाद्यों का चलन रहा है। केवल शास्त्रीय संगीत में ही नहीं अपितु लोक संगीत में भी भिन्न भिन्न वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। अत: वाद्यों की

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

विशाल परम्परा को देखते हुए हम कह सकते है कि नाद महासागर की भांति भारतीय वाद्यों की संख्या भी अनंत है। भारतीय वाद्य संगीत में वाद्यों के वर्गीकरण के इतिहास को प्राचीनतम कहना अतिश्योक्ति न होगा क्योंकि वाद्यों की हज़ारों वर्ष प्राचीन समृद्ध परम्परा अर्थात वाद्यों के स्वरुप उनकी वादन प्रक्रिया आदि का विशद् अध्ययन हम प्राचीन ग्रंथों तथा उस समय के प्रचलित वाद्यों से कर सकते है। यह सभी प्राचीन ग्रन्थ इसके साक्षी है कि उक्त काल में भी भारतीय वाद्यों का स्वरुप अत्यधिक परिष्कृत , वैज्ञानिक तथा समृद्ध था।

महर्षि भरत ने नाटक में वाद्यों को आवश्यक माना है। उनके अनुसार कोई भी वाद्य ऐसा नहीं जो नाटक के दसों भेदों में प्रयोग न हो सके। इस प्रकार नाट्यकला में भी वाद्यों का प्रयोग शुभ मंगल एवं सफलता का सूचक माना गया है। शास्त्रीय संगीत तो बिना वाद्य के होना संभव ही नहीं। प्रत्येक वाद्य किसी न किसी भाव का प्रतीक है। प्राचीन काल से आज तक वाद्य किसी अवसर या प्रायोजक विशेष से सम्बंधित माना गया है। वाद्यों के सुर, वेदना-संवेदना को वयक्त करने में सक्षम होते है।

भारतीय संगीत में तंत्री वाद्यों का अपना एक विशिष्ट स्थान है । विभिन्न प्रकार के वाद्यों में से तंत्री वाद्य शायद सबसे बढ़िया ढंग से मानवीय भावनाओं को ज़ाहिर कर पाते हैं । संगीत वाद्यों का प्रचलन वैदिक काल से पहले से ही रहा है लेकिन इनका प्रचलन का वर्णन सर्वप्रथम वैदिक काल से ही उपलब्ध होता है। "यद्यपि यह वर्णन संक्षिप्त है, परन्तु इस से यह प्रमाणित होता है कि उक्त काल में चतुर्विध वाद्यों का विकास हो चुका था। सामगान में ताल की संगति के लिए दुंदुभि नामक चर्मवाद्य या अवनद्ध वाद्य का प्रयोग होता था। इसके अतिरिक्त अन्य चर्म वाद्यों में द्रव्य के केतुमत, बिश्रमोप्य के नाम उपलब्ध है।"[4]

अवनद्ध वाद्यों की अपेक्षा तंत्री वीणाओं का अत्याधिक प्रचार था। काठ संहिता में कांड वीणा, ऋक में वाण का, ऋग्वेद संहिता में मरूदवीणा, अलाबूवीना, शीलवीणा, कर्करी और न जाने कितनी वीणाओं का प्रयोग हुआ करता था। संभवतः वीणाओं के प्रयोगानुसार इनका नाम रखा हुआ होगा, लेकिन तत्कालीन लिखित सामग्री के आभाव से वीणाओं की पूरी जानकारी प्राप्त नहीं होती। वैदिक ग्रंथों के उल्लेख से यह निश्चित होता है कि तंत्री वाद्यों और अवनद्ध वाद्यों की अधिकता के कारण ही उस समय वाद्यों के वर्गीकरण की आवश्यकता पड़ी।

भारतीय संगीत वाद्य में लिखा है कि " वैदिक युग में तंत्री वाद्यों के नाम 'हिरण्यकेशी सूत्र' में प्राप्त होते है। जिसके आधार पर ताल्लुक वीणा, काण्ड वीणा, पिच्छोरी वीणा, अलाबू वीणा, कपिशीर्ष वीणा आदि की गणना की जा सकती है। ऋग्वेद में 'वाणस्य स्स्धातुरज्जिन:' वाली शततंत्री वीणा का उल्लेख मिलता है।"[5]सुषिर वाद्यों में गोधा, नाली, तूणव, वाणिनी, वेणु, प्रयुक्त नालिका के नाम प्राप्त होते है।उस

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

समय घन वाद्य मुख्यत: लोक संगीत में ही प्रयोग होता था। डा. श्रीधर परांजपे ने अपनी पुस्तक संगीत बोध में लिखा है, "वैदिक युग में तत, वित्त, सुषिर वर्ग के वाद्य प्रचलित थे।"[6]

कोहल ने भी ध्वनियों के आधार पर पंच महावाद्यों का वर्गीकरण किया है। महर्षि दतिल और भरत ने इनकी संख्या चार मानी है जो तत्, अवनद्ध, घन एवं सुषिर है। डा. सुदीप राय ने अपनी पुस्तक में आचार्य अभिनव गुप्त के द्वारा वाद्य वर्गीकरण को इस प्रकार बताया है – "तत तथा सुषिर वाद्यों का प्रयोग स्वरों के लिए, अवनद्ध तथा घन वाद्यों का प्रयोग ताल के लिए किया जाता है।"[7]

प्राचीन युग के विकसित वाद्यों के प्रकारों को देखते हुए महर्षि भरत का वर्गीकरण सर्वथा उचित तथा पर्याप्त प्रतीत होता है। उन्होंने वर्णित किया है –

"ततं चैवावनद्धं च घनं सुशिरमेव च।
चतुर्विध तु विज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितम्"[8]

नाट्यशास्त्र में निर्दिष्ट तत, अवनद्ध, सुषिर एवं घन वाद्यों का यही वर्गीकरण प्रमाणिक, वैज्ञानिक, व्यवहारिक और सर्वकालिक रहा है। इसी कारण तब से ले कर हज़ारों वर्षों बाद भी संगीत के क्षेत्र में इसकी मान्यता स्वीकार की जाती है।

<u>भारतीय संगीत परम्परा में वाद्यों का महत्व</u>: - भारतीय शास्त्रीय संगीत में वाद्यों का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसकी उत्पति और विकास के आधार पर संगीत ग्रंथों ने प्रमाणित किया है कि वाद्यों की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है।

शास्त्रीय संगीत की प्रमाणिकता को सिद्ध करने में वाद्यों का बहुत महत्व रहा है। सर्वप्रथम आचार्य भरत ने २२ (बाईस) श्रुतियों को सिद्ध करने के लिए वीणा का आधार लिया। भरत के पश्चात् दूसरे आचार्यों ने वीणा के माध्यम से सप्तक के स्वरों व श्रुतियों को स्पष्ट किया तथा आधुनिक युग में प. भातखंडे जी ने भी अपने ग्रंथों में इसी आधार पर श्रुति व्यवस्था की चर्चा की तथा भिन्न भिन्न सिद्धांतों का विवेचन कर निर्णय प्रस्तुत किये, जिनकी मान्यता तब से लेकर आज तक बनी हुई है।

डा. प्रकाश महाडिक ने भारतीय संगीत के तंत्री वाद्य में लिखा है कि "डा. लालमणि मिश्र ने प्रचलित रूद्र वीणा में आवश्यक परिवर्तन कर 'श्रुति वीणा' नामक तंत्री वाद्य का निर्माण किया। जिसके माध्यम से भरत के षड्ज तथा मध्यम ग्राम के स्वरों को स्पष्ट समझाना संभव है।"[9] स्व. आचार्य बृहस्पति ने "श्रुतियों के अंतराल की असमानता को सिद्ध करने के लिए 'श्रुति दर्पण' नामक वाद्य का निर्माण किया।"[10] निष्कर्ष यह है की प्राचीन काल से ले कर वर्तमान तक स्वर को साकार रूप देने से अर्थात प्रत्यक्ष समझाने में वीणा का ही सहारा लिया गया।

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

प्रयोग विस्तार की दृष्टि से तंत्री वाद्यों का अपेक्षाकृत आधिक महत्व है। भले ही इन में शब्दों का आभाव हो किन्तु जहाँ तक स्वर और लय एवं संगीतात्मक वातावरण बनाए रखने की अपेक्षा की जाती है वहां वाद्य अन्य किसी कला का सहारा लिए बिना ही श्रोताओं को आनन्द की अनुभूति करने में सक्षम होते है। अतएव तंत्री वाद्यों में प्रयोग विस्तार अपेक्षाकृत अधिक है।

संगीत का कोई भी अंग बिना वाद्यों की सहायता से पूर्ण नहीं हो सकता। गायन में तानपूरा, सारंगी और स्वरमंडल या तबला की अपेक्षा रहती है तो नृत्य में भी नगमे के लिए सारंगी आदि वाद्यों का प्रयोग गायन अथवा नृत्य कला में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते है।

वाद्यों को महत्वपूर्ण बनाने का कार्य शास्त्रीय संगीत की विवेचना में उनका सहयोग, यदि यह कहा जाये कि वाद्य न होते तो शास्त्रीय संगीत की कोई परम्परा न होती और यदि होती तो उसकी विवेचना का कोई उपाए न होता तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। स्वरोत्पति, स्वरस्थान का स्थिरीकरण, स्वरान्त्राल्यों की नाप जोख आदि कार्य बिना तंत्री वाद्यों के असंभव थे।[11] कहा जाता है की " वाद्यों के विकास के इतिहास में तंत्री वाद्य का जितना आधिक विकास हुआ है उतना अन्य किसी वाद्य का नहीं।"[12] आज शास्त्रीय संगीत का जितना अधिक विस्तार और वैज्ञानिक पाठ पठन चल रहा है, उसका मूल स्रोत तंत्री वाद्य (वीणाएं) ही रहे है। आज के वैज्ञानिक युग में स्वरों के नाप जोख के लिए उनकी ट्यूनिंग के लिए मोनोकार्ड, ट्यूनिंग फॅार्क आदि उपकरणों का प्रयोग किया जा रहा है। तत्पश्चात उसके सैद्धांतिक परिणाम निकाले जाते है। परन्तु प्राचीन काल में न तो कोई प्रयोगशाला थी, न ही वैज्ञानिक उपकरण। उनके पास केवल कर्ण या कंठ जैसे प्राकृतिक उपकरण थे, जिसके आधार पर उन्होंने संगीत के जो सैद्धांतिक निष्कर्ष दिए वह आज तक प्रामाणिक समझे जाते है। इन सिद्धांतों का सही विश्लेषण करने का एक मात्र आधार तंत्री वाद्य वीणा ही था। तात्पर्य यह है की शास्त्रीय विश्लेषण या स्वतंत्र वाद्य वादन हो तंत्री वाद्यों की उपादेयता न केवल आवश्यक है अपितु अपरिहार्य है।

परन्तु आज के इस वैज्ञानिक युग में डिजिटल वाद्य यन्त्र का चलन कुछ ज्यादा ही देखने को मिलता है। कलाकार अपने मंच प्रदर्शन के समय डिजिटल तानपुरा या नगमा प्लेयर का अधिक इस्तेमाल करते है। रिकार्डिंग स्टूडियो में भी कम्प्यूटर द्वारा बिना किसी वाद्य यन्त्र की सहायता से रिकार्डिंग की जा रही है। keyboard के प्रयोग से हम लगभग हर वाद्य यन्त्र की ध्वनि को प्राप्त कर सकते है। Digital Pad में आज कल हर अवनद्ध वाद्य की ध्वनि प्राप्त होती है। तबला से लेकर पखावज, ढोल से लेकर ढोलकी, घुंघरू हो मंजीरे इत्यादि सब को एक ही यन्त्र में सम्मिलित कर दिया गया है। नई तकनीक के साफ्टवेयर के साथ

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

आप वाद्य यंत्रो की ध्वनियों के साथ नए नए प्रयोग तो कर सकते है परन्तु जो आनंद वाद्य की असली ध्वनि में है वह बात कृत्रिम ध्वनि में नहीं मिल सकती ।

आज आप जब भी रियाज़ करने बैठे तो अपने साथ डिजिटल तानपुरा या डिजिटल तबला लगा कर रियाज़ कर सकते है परन्तु मंच प्रदर्शन के समय आप डिजिटल तबला का प्रयोग नहीं कर सकते । जो वाद विवाद आप तबला वादक के साथ समुख कर सकते है वह डिजिटल तबला से मुमकिन नहीं हो सकती ।

अत: परिवर्तनशीलता प्रकृति का नियम है जिसे हम चाह कर भी नहीं बदल सकते । जो तकनीक आज हम देख रहे है वह तकनीक कुछ दशकों पहले तक संभव नहीं थी और आने वाले समय में क्या क्या नई तकनीकें विकसित होंगी इसका हम अंदाजा भी नहीं लगा सकते ।

संदर्भ सूची

---

[1]डा. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत के वाद्य, पृष्ठ 5

[2]रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोष, खंड पांच, पृष्ठ 34

[3]डा. अशोक कुमार, संगीत और संवाद, पृष्ठ 109

[4]डा. रेखा सेठ, भारतीय तंत्री वाद्यों की उत्पति एवं महत्व, पृष्ठ 53

[5]डा. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत के वाद्य, पृष्ठ 56

[6]डा. शरदचंद्र श्रीधर परांजपे, संगीत बोध, पृष्ठ 132

[7]डा. सुदीप राय,जहान ऐ सितार, पृष्ठ 20

[8]आचार्य भरत नाट्यशास्त्र, पं.केदारनाथ द्वारा सम्पादित काव्यमाला 42 में से उद्धृत अध्याय 28, श्लोक, पृष्ठ 430

[9]डा. प्रकाश महाडिक, भारतीय संगीत के तंत्री वाद्य, पृष्ठ 3

[10]डा. प्रकाश महाडिक, भारतीय संगीत के तंत्री वाद्य, पृष्ठ 234

[11]डा. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत के वाद्य, पृष्ठ 40

[12]डा. इन्द्राणी चक्रवर्ती, म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स ऑफ़ इंडिया, हिंदी रूपान्तर, संगीत पत्रिका, 1980, पृष्ठ 21

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies